हुसैन[अ०] की शहादत और उसके कारण

आयतुल्लाहिलउज़मा सैय्यिदुलउलमा सै० अली नक़ी नक़वी ताबा सराह
अनुवादकः सै० गुलाम अब्बास रिज़वी "ज़रग़ाम", जौनपुरी

दुनिया में कोई ज्ञानी ऐसा नहीं होगा जिसने 'अरब' का नाम न सुना हो। अरब एक विशाल रेगिस्तानी देश है, जो एशिया के पश्चिमी सीमा पर स्थित है। इसी देश से सातवीं शताब्दी के प्रारम्भ में एक इन्क़ेलाब की लहर उठी जिसका नाम 'इस्लाम' है।

इसी इन्क़ेलाब के मुखिया हज़रत मोहम्मद[स०] बिन अब्दुल्लाह थे, जिन्होंने अपनी पैग़म्बरी का (अल्लाह के दूत होने का) का ऐलान करते हुए दुनिया को कामिल तौहीद (ऐकेश्वरवाद) का पैग़ाम (संदेश) पहुँचाया और बुत परस्ती (मूर्ति पूजा), इक़्तिदार परस्ती (सम्मान) सरमाया परस्ती यहाँ तक कि अल्लाह के अलावा हर प्रकार की उपासना का विरोध किया। इससे उन लोगों में खलबली मच गई जिनको इस शिक्षा से नुकसान पंहुचना था। उन्होंने इस इन्क़िलाब को रोकने की कोशिश की, और उनके हाथों पैग़म्बर[स०] साहब (अल्लाह के दूत) को बड़ी कठिनाईयाँ उठाना पड़ीं। इस विरोध में बनी उमईय्या आगे आगे थे। इसलिए कि यद्यपि पैग़म्बरे इस्लाम[स०] की शिक्षा किसी खानदान की ऊँचाई, किसी ख़ानदान की पस्ती के पक्ष में नहीं थी परन्तु आप की शिक्षा में बलन्दी (ऊँचाई) और इज़्ज़त का जो मेयार क़रार दिया गया (पैमाना बनाया गया) था वह सिर्फ़ व्यक्तित्व की ख़ूबी और फ़रायज़े इन्सान की बजावरी (मनुष्य के कर्तव्यों की पूर्ति) थी। इस पैमाने पर बनी उमईय्या के अधिकतर लोग खरे न उतरते थे। अतः उमईय्या के पोते अबू सुफ़ियार बिन हरब ने इस्लाम के विरुद्ध बग़ावत का झंडा उठा लिया। अरब के हठधर्मी और जाहिल (अज्ञानी) इस झंडे के नीचे इक्ट्ठा हो गये। और हज़रत मुस्तफ़ा[स०] को सताने लगे और तब्लीग़े इस्लाम में रोड़े अटकाने लगे।

पहले तो आप मुसीबते और सख़्तियाँ झेलते रहे परन्तु जब उन लोगों ने एका करके आपको क़त्ल करने का फ़ैसला कर लिया तो मजबूरन आप अपने स्वदेश मक्का को छोड़ कर मदीने मे जा बसे। जहाँ के लोगों ने आपकी शिक्षा को स्वीकार किया था, और पहले से आपके सहयोग का वादा कर चुके थे। इसी बात को हिजरत के नाम से जाना जाता है। और इसी से मुसलमानों का हिजरी सन् प्रारम्भ हुआ।

दुश्मनों (शत्रुओं) ने हिजरत के बाद भी आपको चैन से न बैठने दिया और अनेकों बार चढ़ाई करे आपको क़त्ल करने आये। मजबूरन आपको कई लड़ाईयाँ लड़नी पड़ीं, जिनमें बद्र, ओहद और अहज़ाब बहुत मशहूर हैं, मगर इन सभी लड़ाईयों में अबूसुफ़ियान को हर मरतबा हार हुई और हज़रत मोहम्मद मुस्तफ़ा[स०] के अनुयायियों की संख्या और शक्ति लगातार बढ़ती रही। अन्ततः बनी उमईय्या की शक्ति बिल्कुल टूट गई और अपनी कमज़ोरी छिपाने के लिए उन्होंने भी इस्लाम की स्वीकारोक्ति (क़ुबूल) का लबादा ओढ़ लिया। परन्तु समय के इन्तिज़ार में थे कि इस्लाम की शक्ति ज़रा भी कम हो तो उन्हें अपने खोये हुए सम्मान को वापस लाने का मौक़ा मिले।

हज़रत मोहम्मद मुस्तफ़ा[स०] के जीवन में उनके इस उद्‌देश्य की पूर्ति होने की सम्भावना नहीं थी। परन्तु इसके थोड़े समय पश्चात् हज़रत की वफ़ात (मृत्यु) हो गई और मुसलमानों के निज़ाम (व्यवस्था) में अफरा तफ़री पैदा हो गई। सल्तनते वक़्त के दीनी मसालेह

(समय की धार्मिक समस्याओं) ने बनी उमईय्या को शाम में अपना शासन स्थापित करने का मौक़ा दे दिया जो प्रारम्भ में एक सूबेदार या गर्वनर की हैसियत से थी। परन्तु धीरे धीरे उसके सम्मान और शक्तियों में बढ़ोत्तरी होती गई, यहाँ तक कि अन्त में उसने स्वयं को सूबे के मालिक की हैसियत प्राप्त कर लिया। उन लोगों ने शाम के देश में अपना क़ब्ज़ा जमाते ही हज़रत मोहम्मद मुस्तफ़ा[स॰] के बताये हुए तरीक़ो और इस्लाम की फ़ैलाई हुई छवि को मिटाना प्रारम्भ कर दिया और अन्त में तो यह हालत हो गई कि क़ुर्आन की शिक्षाओं का खुले आम विरोध होने लगा।

हज़रत रसूल[स॰] के सच्चे उत्तराधिकारी, जो इस्लामी संस्कार और सांस्कृति के रखवाले थे, उसको किसी प्रकार बर्दाश्त न कर सकते थे। जब अली इब्ने अबू तालिब[अ॰] जो रसूल[स॰] के सगे चचेरे भाई, उनकी आवाज़ पर सबसे पहले आने वाले और शुरू से अन्त तक इस्लाम के प्रकाशन में उनके साथ थे, मुसलमानों के तख़्ते हुकूमत पर आये तो उन्हें हुकूमते शाम से मुक़ाबला करना पड़ा और सिफ़्फ़ीन की ख़ूँरेज़ (रक्त रंजित) लड़ाई हुई। परन्तु अभी हज़रत अली[अ॰] का इरादा और कार्य पूरा नहीं हुआ था कि मस्जिदे कूफ़ा में सज्दे की हालत में हज़रत के सर पर तलवार मारी गई जिससे आपने शहादत पाई।

हज़रत अली के बाद आपके बड़े बेटे हज़रत इमाम हसन[अ॰] ने कुछ शर्तों के साथ शाम से सुलह कर ली। परन्तु शाम की हुकूमत इन शर्तों का उल्लघंन करती रही और गुप्त रूप से ज़हर दिलवाकर उनकी जीवन लीला समाप्त कर दिया।

अब पैग़म्बरे इस्लाम के परिवार में इस्लाम की शिक्षाओं को बचाने की पूरी ज़िम्मेदारी हुसैन[अ॰] पर थी, जो हज़रत मुस्तफ़ा[स॰] के दूसरे नवासे और हज़रत अली[अ॰] के छोटे बेटे थे।

हुकूमते शाम के तख़्त पर अबू सुफ़ियान का पोता यज़ीद बिन माविया बैठा, जो बड़ा ही शराबी, दुष्चरित्र था। और ऐसे अस्वभाविक जुर्म करता था जिसका सही वर्णन भी सभ्यता के विरुद्ध है। इसके बावजूद इतने दिन की मज़बूत कुशासन के डर से प्रजा को दम मारने की हिम्मत न थी। वह हुकूमत के अत्याचार से इतना भयभीत हो गये थे कि उन्हें ईश्वर का भी डर नहीं था। परन्तु यज़ीद जानता था कि हज के देश के शहर मदीना के मुहल्ला बनी हाशिम के अन्दर एक इन्सान है, जो मुझसे नहीं डरता, सिर्फ़ ख़ुदा से डरता है और वह इस्लाम के क़ानून का सच्चा रखवाला, रसूल[स॰] का नवासा है। वह ख़ामोश सही परन्तु क्या मालूम किस दिन दुनिया की आँखों से ग़फ़लत के पर्दे हट जायें और सत्य की ओर खिंच जायें। इसी कारण यज़ीद को चिंता हुई कि किसी भी प्रकार हुसैन[अ॰] से बैयत(धार्मिक नेता) प्राप्त करे। अन्ततः उसने मदीने के शासक वलीद बिन अत्तबा बिन अबु सुफ़ियान को आदेश दिया कि हुसैन से बैयत प्राप्त करो, और इस बात में किसी ढिलाई से काम मत लो।

हुसैन[अ॰] ने इस संदेश का अर्थ समझ लिया और आप उसे पहले से ही समझे हुए थे। उसूलन आपके लिए यज़ीद की बैयत करना सम्भव नहीं था। निःसदेंह सर कटवाना आसान, था मगर स्वयं देखभाल के कर्तव्य को पूरा करने के बाद जो इस्लामी क़ानून का एक आधारिक आदेश है।

इसलिए हुसैन[अ॰] ने देश छोड़ने का फ़ैसला कर लिया। आपने अपने सम्बन्धियों को जिनमें औरतें और बच्चे भी थे अपने साथ लिया और मक्के में जाकर बस गये। इस प्रकार आपने सिद्ध कर दिया कि आप किसी से लड़ाई करके अपनी और अपने साथियों की जान को जोखिम में डालना नहीं चाहते थे, बशर्त यह कि आपको यज़ीद की बैयत पर मजबूर न किया जाता।

मक्का अरब के अन्तर्राष्ट्रीय कानून और इस्लाम की ओर से ऐसा स्थान था, जहाँ किसी यात्री को डर नहीं होना चाहिए, परन्तु हुसैन[अ॰] को यहाँ भी अपने क़त्ल का सामान दिखाई दिया, और हज के समय जबकि सम्पूर्ण इस्लामी जगत मक्के की ओर खिंचा चला आ रहा था, हुसैन[अ॰] को मक्का भी छोड़ना पड़ा और आपने कूफ़े की ओर प्रस्थान किया, जहाँ के लोग आपको आग्रह के साथ बुला रहे थे, और आपसे धार्मिक

अगुवाई की प्रतिक्षा में थे, और अपने चचरे भाई मुस्लिम बिन अक़ील को वहाँ का जायज़ा लेने भेज भी चुके थे। परन्तु इस दौरान कूफ़ा के हालात बदल चुके थे। वहाँ पत्थर दिल शासक उबैदुल्लाह बिन ज़्याद का राज हो गया और मुस्लिम बिन अक़ील क़त्ल कर डाले गये। इसके बाद कूफ़ा जाने का कोई मौक़ा नहीं था परन्तु मक्का और मदीना जाने की भी कोई सम्भावना नहीं थी। इधर कूफ़े से आपको गिरफ़्तार करने के लिए सेना भेद दी गई, जिसने आपको आगे बढ़ने या वापस जाने से रोका, मजबूरन आप कर्बला की ज़मीन पर उतर पड़े।

दूसरे ही दिन से यज़ीद का टिड्डी दल कर्बला के मैदान में आना शुरू हो गया, सभी रास्ते बन्द कर दिये गये और इमाम हुसैन[अ०] को घेर कर यज़ीद की बैयत का आग्रह किया जाने लगा। हज़रत इमाम हुसैन[अ०] के साथ केवल आपके सत्तरह सम्बन्धी कुछ गुलाम, और लगभग सौ वह खास दोस्त थे, जो कूफ़ा या अन्य दूसरे स्थानों से रास्ता बन्द होने के बावजूद किसी प्रकार आप तक पंहुच गये थे।

सातवीं मोहर्रम से आप पर तथा आपके अन्य साथियों, यहाँ तक कि छोटे बच्चों तक पर पानी बन्द कर दिया गया, मगर चूंकि शांति आपका सच्चा जीवन का आधार था अतः आपने अपनी बात के तौर पर कुछ शर्तें यज़ीदी सेना के अधिकारी उमर बिन साद के सामने रखी जिससे बात साफ़ हो जाये और लड़ाई की नौबत न आये। आपके कार्य का तरीक़ा इतना सुलझा हुआ था कि उमर बिन साद को भी यह मानना पड़ा कि हुसैन[अ०] सुलह के रास्ते पर हैं। अतः उसने कूफ़े के शासक उबैदुल्लाह बिन ज़ियाद के पास इसी सम्बन्ध में एक पत्र भेजा था। मगर इब्ने ज़ियाद को हुकूमत का घमंड और शासन का नशा था। उसने हुसैनअ० को पहचाना भी नहीं था कि वह समस्याओं का कहाँ तक मुक़ाबला कर सकते हैं। उसने आपकी सुलह पसन्दी को कमज़ोरी घबराहट का नतीजा सोंच कर उमरे साद को पत्र लिखा कि हुसैन[अ०] बिना किसी शर्त के बैयत कर लें तब ही उनकी जान बच सकती है। कर्तव्य परस्त हुसैन के लिए ऐसा सम्भव ही न था।

नवीं मोहर्रम की शाम को उस बड़े लश्कर ने आप पर हमला कर दिया मगर आपने एक रात्रि के लिए लड़ाई रोकने की ख़्वाहिश की, जो बड़ी मुश्किल से मंजूर हुई। आपका मक़सद यह था कि अन्तिम बार ये पूरी रात ईश्वर की पूजा के गुज़ार सके। इसके अलावा दोस्त और दुश्मन दोनों के जंग के लगभग तय हो जाने के बाद सोचने का समय दे दें, दुश्मनों पर बात समाप्त हो जाये और दोस्तों में से कोई साथ छोड़ कर जाना चाहता हो तो चला जाये। आपने अपने साथियों को इक्ट्ठा करके साफ़ तौर पर बता दिया कि कल हमारे जीवन का फ़ैसला है, मैं तुम से अपनी बैयत की ज़िम्मेदारी हटा लेता हूँ, तुम इस रात के अंधेरे में जिधर चाहो चले जाओ, मगर उन जाँबाज़ों ने इस मौक़े का फ़ायदा उठाना नहीं चाहा और एक ज़बान होकर कहा कि हम आपका साथ कभी न छोडेंगे। उन लोगों ने जो कहा था वही कर दिखाया।

सामने सेनाओं का समन्दर लहरें मार रहा था। परन्तु विरानी और बर्बादी के अलावा कुछ नज़र नहीं आ रहा था। सम्बन्धियों, भाईयों, भतीजों और संतान के ख़ूबसूरत चेहरे इमाम के सामने थे और आपके साथ पर्दादार औरतें और छोटे बच्चे भी मौजूद थे। नदी पर सेना का पहरा बैठा हुआ था, और हुसैन[अ०] और उनके साथियों तक पानी की एक बूँद के पंहुचने की इजाज़त न थी। बेज़बान बच्चे प्यास के कारण परेशान दिख रहे थे, परन्तु शक्ति का प्रदर्शन और अत्याचार की हर सम्भव कोशिशें इमाम हुसैन[अ०] और आपके साथियों को मजबूर न कर सकीं की एक अधर्मी को जायज़ शासक कुबूल कर लें।

दसवीं मोहर्रम को सुबह से दोपहर के बाद तक हुसैन[अ०] के जाँबाज़ साथी जो आपसे पारिवारिक सम्बन्ध न रखते थे, बराबर अपनी जानें आप और आपके उसूल की ख़ातिर बलिदान करते रहे। जब उनमें से कोई नहीं बचा तब सम्बन्धियों की बारी आयी। इस समय आपके लिए आसान होता कि आप स्वयं ही आगे बढ़ कर सत्य मार्ग पर अपने सर को भेंट कर देते, परन्तु आपको अपनी सहनशक्ति की पूरी परिक्षा देनी थी। अतः इसके बाद आपके सम्बन्धी आपसे जुदा होने

लगे। सबसे पहले आपने अपने जवान बेटे अली अकबर^{अ०} को जो पैग़म्बर^{स०} की छवि थे मरने के लिए भेजा। माँ ख़ैमे मे थी और बाप ख़ेमे के दरवाज़े पर उनका चाँद शत्रु की सेना की घटा में छिपा हुआ था। बाप ने देखा और माँ ने सुन लिया कि अली अकबर तलवारों से टुकड़े टुकड़े हो गये, परन्तु धैर्य एवं शान्ति में बदलाव नहीं आया। इसके बाद दूसरे सम्बन्धी भी एक-एक करके विदा हुए और सत्य मार्ग पर न्यौछावर हो गये। सबसे अन्त में आपके जाँबाज़ भाई अब्बास बिन अली^{अ०} आप से विदा हुए। ये हुसैनी गुट के (अलम्बरदार) अगुवा थे, जिनके क़त्ल होने से हुसैन^{अ०} की कमर टूट गई परन्तु हिम्मत नहीं टूटी। इसके बाद आपके पास कोई चीज़ सत्य के मार्ग में न्यौछावर करने के लिए न बचा। मगर सबके आख़िर में आपने एक ऐसा मासूम (निष्पाप) दक्षिणा पेश कर दिया जिस पर किसी धर्म और क़ानून से मुजरिम होने का इल्ज़िाम न आ सकता था।

वह दूधमुँहा बच्चा जो अपनी माँ की गोद में प्यास से सिसकियाँ ले रहा था, हुसैन^{अ०} ने उसकी हालत देखी और शत्रु की सेना के सामने अपने हाथों पर लाये, यह था हुसैन^{अ०} की अन्तिम दक्षिणा (फ़िद्या), मानवता के हाथ पैर थर्रथराने लगे और रहम व करम की दुनिया में अंधेरा छा गया, जब शत्रु सेना के एक सिपाही ने तीर को धनुष में जोड़ा और बच्चे की गर्दन का निशाना बना लिया। हुसैन^{अ०} का ये अन्तिम उपहार भी कुबूल हो गया।

अब क्या था! स्वयं हुसैन^{अ०} को सत्य के समर्थन में जिहाद का कर्तव्य पूरा करना था और अपनी जान का बलिदान देना था। अतः आपने इस लाचारी की हालत में तलवार म्यान से निकाली, और जितनी इन्सानी हैसियत से अल्लाह ने शक्ति दी थी उस हद तक बड़ा कड़ा मुकाबला किया। वह मुकाबला जो ऐसे हालात में आम आदमी की शक्ति से ऊपर था, परन्तु कहाँ एक आदमी का शरीर और कहाँ फ़ौलादी तलवारों का जमघट, शरीर घाँवों से भर गया। आप घोड़े से ज़मीन पर गिरे और वह उद्देश्य जो आपके के लिए पहले से ही आसान था, अब अधिक आसान हो गया, आपका सर काट कर नैज़े (भाल) पर उठाया गया, शहीदों की लाशें घोड़ों से रौंदी गईं। माल व समान लूटा गया। रसूल^{स०} के परिवार की पवित्र औरतों के सर से चादरें उतारी गईं, ख़ैमों मे आग लगाई गई, मर्दों एक बीमार व नाचार अली इब्नुल हुसैन^{अ०} बाक़ी थे जिन्हें हथकड़ियाँ व बेड़ियाँ पहनाया गया। अरब की शरीफ़ परिवार की इज़्ज़तदार औरतें असीर (क़ैद) करके एक शहर से दूसरे शहर घुमाई गईं।

अज़ादारी-ए-शब्बीर

मोहतरमा कनीज़ अकबरपुरी

ईमाँ की है पहचान अज़ादारी-ए-शब्बीर
है ख़ल्क़ पे एहसान अज़ादारी-ए-शब्बीर

लम्हों में बना देती है बेहोश को बाहोश
रखती है बहुत जान अज़ादारी-ए-शब्बीर

देती है अज़ादार को ये दौलते कौनैन
क्या ख़ूब है सामान अज़ादारी-ए-शब्बीर

मैं ज़िन्दा हूँ इसके लिए, मैं ज़िन्दा हूँ इससे
है ज़ीस्त का सामान अज़ादारी-ए-शब्बीर

खुद मिट गये आदा-ए-अज़ा, बाक़ी अज़ा है
मिट सकती है नादान अज़ादारी-ए-शब्बीर

शब्बीर से तूफ़ाने सितम हार गया है
है फ़तह का ऐलान अज़ादारी-ए-शब्बीर

खुशबख़्त कनीज़ हूँ कि मेरे ख़ान-ए-दिल में
बचपन से है मेहमान अज़ादारी-ए-शब्बीर